>

Title: Discussion on the motion for consideration of the Constitution (Amendment) Bill, 2010 (Amendment of the Eighth Schedule).

MR. CHAIRMAN : Now, the House shall take up Item No. 31 – Shri Satpal Maharaj.

श्री सतपाल महाराज (गढ़वाल): धन्यवाद, सभापति महोदय, आपने मुझे बोलने का मौका दिया।

मैं गढ़वाली और कुमाऊंनी भाषा को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने के लिए संविधान में संशोधन करने के लिए यह विधेयक लाया हूं।

महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि भारत के संविधान में और संशोधन करने वाले विधेयक पर विचार किया जाए।"

उत्तराखण्ड की प्राचीन भाषा वैदिकी थी। ऋषि-मुनियों ने इसी वैदिकी में संहिताएं लिखी हैं। लगभग 500 ई.पू. में पाणिनी ने इसका संस्कार किया और इसे व्याकरण के नियमों में बांधा। इसे वैदिक संस्कृति कहा गया। इसी वैदिक संस्कृत में ब्राह्मणग्रन्थों, आरण्यकों एवं उपनिषदों की रचना हुई। महर्षि पाणिनी ने इसी को भाष्य या भाषा कहा। आगे चलकर वैदिक संस्कृत ने ही प्राकृत भाषा का रूप ले लिया। इसका प्रयोग कालिदास ने अपने नाटकों में किया। 500 ई.पू. से 1000 ई. तक की अवधि में इस प्राकृत के तीन रूप पाये जाते हैं। प्रथम प्राकृत भाषा पालि कहलाई। बौद्ध शिलालेखों में इसका प्रयोग हुआ। पालि के बिगड़े हुए स्वरूप को द्वितीय प्राकृत कहा गया। इस भाषा के अनेक रूप बने, जैसे शौरसेनी प्राकृत, पैशाची प्राकृत, मागधी प्राकृत, महाराष्ट्री प्राकृत, मागधी, अर्धमागधी, ब्राचड़, कैकय, खस आदि। ये ही भाषाएं साहित्य की भाषाएं बनीं। कालक्रमानुसार इन भाषाओं के रूप बिगड़े, जिन्हें अपभ्रष्ट या अपभ्रंश कहा जाने लगा। शौरसेनी के अपभ्रंश से शौरसेनी प्राकृत निकली। इसी शौरसेनी अपभ्रंश से पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती एवं मध्यवर्ती पहाड़ी समूह की भाषाएं उत्पन्न हुई। इसी समूह में गढ़वाली एवं कुमाऊंनी भाषाओं की उत्पत्ति हुई और यह इन भाषाओं में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन्हीं के साथ-साथ पूर्वी पहाड़ी भाषा के रूप में नेपाली एवं पश्चिमी पहाड़ी के रूप में हिमांचली भाषा का जन्म हुआ। लौकिक संस्कृत-पाली प्राकृत अपभ्रंश (शौरसेनी) गढ़वाली के क्रम में गढ़वाली भाषा का विकास हुआ।

महाराजा अजयपाल ने छोटे-मोटे रजवाड़ों को जीतकर के, 52 गढ़ों को जीत करके गढ़वाल राज्य को स्थापित किया और उस राज्य के अन्दर गढ़वाली भाषा बोली जाने लगी। यह देवभाषा है। वह हिमालय पर्वत, जिसको भारत का उच्च-भाल कहा जाता है, जो भारत का मस्तक है, जहां पर केदारनाथ, बद्रीनाथ, चार धाम जहां पर विराजमान हैं, इस भाषा का घर है। जहां पर पंच-बद्री, पंच-केदार, पंच-प्रयाग विराजमान हैं, 33 करोड़ देवी-देवता जहां पर रहते हैं, उस उत्तराखंड में उनकी भाषा गढ़वाली और कुमाऊंनी भाषा है।

उसके अन्दर ढोलसागर के जरिये अनेक जागर लगाये जाते हैं। ढोलसागर के बारे में श्री प्रीतम भरतवाण के अनुसार पुराणों के अनुसार स्वर और नाद का ज्ञान भगवान शिव ने रूद्र रूप में देवऋषि नारद को इसी देवभूमि में दिया था। ढोलसागर में गुनीजन दास नाम औजी का बार-बार सम्बोधन होता है, जिसमें स्वर, ताल, लय, गमक का विस्तारपूर्वक संवाद होता है तथा गुरू खेगदास का सम्बोधन आह्वान मंत्रोच्चारण में होता है।

नाटयशास्त्रों में यह माना जाता है कि नृत्यों से देवता प्रसन्न होते हैं, इसलिए जागरों में भी अभीष्ट की प्राप्ति एवं अनिष्ट के निवारण के लिए देवता नाचने की प्रथा है। इस प्रकार जागरों में ढोल दमौं, हुड़का, डौंर, थाली वाद्य-यंत्रों का विशेष महत्व है। ढोल दमौं, हुड़का आदि वाद्यों के साथ जब जागर गायन होता है, देवता आकाश से आशीष देने लगते हैं और गन्धर्व पुष्प बरसाते हैं। ऐसा ढोलसागर में लिखा है।

आज भी हमारे उत्तराखंड में जागरों की परंपरा है। जब जागर गाए जाते हैं, तब देवता प्रत्यक्ष हो जाते हैं और मानवों के साथ संवाद करते हैं। ऐसी गढ़वाली और कुमाऊंनी भाषा को हम देवभाषा कहेंगे और यह मांग करेंगे कि इसे आठवीं अनुसूची में स्थान दिया जाए।

सभापति महोदय : आपका भाषण जारी रहेगा। कृपया अब आसन ग्रहण करें।